नमः सिद्धेभ्यः ।

श्रीसिद्धक्षेत्र-पूजासंग्रह ।

संग्रहकर्त्ता और प्रकाशक—

देवरी (सागर) निवासी

कुन्दनलाल जैन ।

वैशाख श्रीवीर निर्वाण सं० २४४२

मई १९१६.

पहली बार १००० ।] [मूल्य आठ आना ।

प्रकाशक—
कुन्दनलाल जैन
ठि० चन्दावाड़ी, पोष्ट गिरगांव, बम्बई।

मुद्रक—
चिन्तामण सखाराम देवळे-
बंबई-वैभव-प्रेस, सँढहर्स्ट रोड
गिरगांव-बम्बई।

भूमिका।

भारतवर्षके तीन चार सिद्धक्षेत्रोंकी पूजनोंके सिवाय शेष सिद्धक्षेत्रोंकी पूजायें अभी तक नहीं छपीं थीं, इसी कमीकी पूर्तिके लिये मैंने यह संग्रह छपाया है। इसमें प्रायः सभी सिद्धक्षेत्रोंकी पूजायें हैं, सिर्फ गुणावाजीकी पूजा ठीक समयपर न मिलनेसे शामिल नहीं की जा सकी, दूसरे संस्करणमें शामिल कर दी जायगी।

बाहूबलीस्वामीकी पूजा पं० दीपचंदजी परवारने और पटनाकी पूजा बाबू पन्नालालजी बिसाना निवासीने रच कर भेजी, इसलिये मै इन दोनों महानुभावोंका चिर कृतज्ञ हूँ।

पं० वृजलालजी अध्यापक महाविद्यालय मथुरा, श्रीयुत अनंतरामजी ललितपुर, मुनीम धर्मचंदजी पालीताना, बाबू परमानंदजी सम्मेदशिखर, मुनीम बदामीलालजी इन्दोर, मुनीम दलीचंद मिश्रीलालजी बड़वानी, मास्टर नन्हेंलालजी संदप्पा, और मुनीम मोतीसाजी मुक्तागिरिको धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते कि जिन्होंने सिद्धक्षेत्रोंकी पूजायें भेजकर इस पुस्तकके संग्रह करनेमें मुझे बड़ी सहायता दी है।

अंतमें निवेदन है कि अल्पज्ञता दृष्टिदोष व प्रमादसे कोई अशुद्धियाँ रह गई हों, तो पाठक महाशय मुझे उनकी सूचना देनेकी कृपा करें, जिससे दूसरे संस्कारणमें वे सुधार दी जावें।

चंदावाड़ी, अक्षय तृतीया वि. सं. १९७३ — विनीत— **कुन्दनलाल जैन।**

सूचीपत्र।

नमः सिद्धेभ्यः ।

श्रीसिद्धक्षेत्र-पूजासंग्रह ।

स्व० कवि बिहारीदासजी कृत

१ श्रीसम्मेदशिखर-विधान ।

सवैया ३१ सा ।

सम्यक्दर्शन ज्ञान चारित तप चारं ही की,
एकतामें लीन होय परमऋषिराज जी ।
करम गण नाश स्वात्मोपलब्धि कर प्रकाश,
तीन लोक चूडामणि भए शिरताज जी ॥
चरम शरीरतें कछुक ऊन पुरुषाकार,
ज्ञानमय शरीर धरें लसत शिवसमाज जी ।
ते ही सिद्धमहाराज मेरे उर भासो आज
तातें मोह जावे भाज सिद्ध होय काज जी ॥ १ ॥

अडिल्ल।

सम्मेदाचल ऊपर प्रथमहिं जायके।
करे सिद्ध इमि ध्यान सु मन वच कायकें॥
पुनि अजितादि निसद्या भू थुति उच्चरे।
पृथक पृथक तिन कूट निकट पूजा करे॥ २॥

ॐ ह्री श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थकरादि असंख्यात मुनि सिद्ध-पद प्राप्ताय अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक।

छद कुसुमलता।

गंगादिक निर्मल जल प्रासुक,
कनक कलशमें भरकें ल्याय।
जन्म जरा मृत नाशन कारन,
धारा तीन देत हर्षाय॥
श्रीविंशति तीर्थंकर मुख मुनि,
असंख्यात जहँते शिव पाय।
सम्मेदाचल तीर्थराजमें पूजत
तिनको ध्यान लगाय॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

बावन चन्दन घिस जल निर्मल,

फैली सरस सुगंध अपार।

सो ले भव-आताप हरन को,

अर्चत सिद्धसमूह चितार॥ श्री०॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय **चन्दनं** निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

सरस अखंडित उज्ज्वल अक्षत,

कनक रकेबीमें भर आन।

अक्षयपदके हेत चढ़ावत,

चतुर्गति अथिर दुखद पहिचान॥ श्री०॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये **अक्षतान्** निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

नानाविधिके पुष्प मनोहर,

फैली सुरभि दसों दिशि सार।

लेकर जजों शिवाचलको,

मो काम शत्रु नाशे दुखकार॥ श्री०॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो कामबाणविध्वंशनाय **पुष्पं** निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

व्यंजन विविध प्रकार मनोहर, रसना नैन घ्राण सुखदाय।

क्षुधावेदनी नाशनकों, नैवेद्य चढ़ावत हर्ष बढ़ाय॥ श्री०॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदाशीरवरासिद्धक्षेत्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय **नैवेद्यं** नि० ५

दीप रतनमय परम अमोलक, तातें पूजत हों शिवराय।
मोहमहातम नाश करो मम, स्वपर प्रकाशक जोत जगाय॥

ॐ ह्रींसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ६

हरिचंदन आदिक सुगंध दस, अगन माहिं खेवत हों डार।
आठ करम मम दुष्ट जरें जिमि, आठों गुण प्रगटें निज सार॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल वर बादाम सुपारी, येला पिस्ता आदि अपार।
फलसों पूजत हों शिवभूधर, दीजे मोक्ष महाफल सार॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि० ॥ ७॥

जल सुगंध तंदुल सु पुष्प चरु, दीप धूप फल अर्घ बनाय।
पद अनर्घके हेत जजत हों, सिद्ध समूह सदा उर लाय॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ नि० ॥ ९॥

तोय गंध अक्षत प्रसून चरु, दीप धूप अर्घादिक ल्याय।
पूरन अर्घ बनाय सम रचों, पूरण काज सिद्ध मम थाय॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घं नि० स्वाहा ॥ १० ॥

प्रत्येक पूजा।

छंद गीतिका।

रागादिक शत्रुनकर अजित, तातें अजित जिन नाम है।
जिन चरन रज ही परसतें, भव होत उज्ज्वल धाम है॥

ते अजितप्रभु निज ध्यान धर, जहँ ते लहो शिवठाम है।
तिहि शैलराज पवित्रको, मो बार बार प्रनाम है॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिन निशद्याभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

दोहा।

श्रीअजितादि मुनीश जे, इस भूतें शिव पाय।
ते पूजों वसु द्रव्य सों, सर्व विभाव पलाय॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके **सिद्धवरकूटसे** अजितनाथ-जिनेन्द्रादि मुनि एक अरब अस्सी कोटि चौवन लाख सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घ नि० ॥ १ ॥

जिनके निमतकर सकल जीवनको, परम सुख होत है।
ते सकल संभव दुःखहरता, परम केवल जोत है॥
तिन अत्र भूधरतें वरी, शिव-इन्दिरा[1] वर वाम है॥ ति०

ॐ ह्रीं श्रीसंभवजिन निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

तीन भुवन जन सुख करन, श्रीसंभवतीर्थेश।
अर्घ लेय पूजत प्रभू, मेटो भ्रमण कलेश॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके **धवलकूटसे** श्री संभवनाथ जिनेन्द्रादि मुनि नौ कोड़ाकोड़ी बहत्तर लाख ब्यालीस हजार पाँच सौ सिद्धपदप्राप्तेभ्यः अर्घ नि० ॥ २ ॥

ज्ञानादि निर्मल गुनन कर हैं, वर्धमान जिनेश जी।
तातें अभिनन्दन सु सार्थक, नाम धर परमेश जी॥

---

1 लक्ष्मी।

जहँ अनिल मुकटानल सु शक्र कृत भयो तन
जिन स्वामि है। तिहि०।

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनादि निर्वाणभूमये पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अभिनन्दन जिन आदि ऋषि, इह थलतें शिवपाय।
ते पूजों मैं अर्घ तें, विघन सघन नश जाय॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके आनंदकूटसे श्रीअभिनन्दन-जिनेन्द्रादि मुनि बहत्तर कोड़ाकोड़ी सत्तर कोटि छत्तीस लाख ब्यालीस हजार सात सै सिद्धपदप्राप्तेभ्यः अर्घं नि०॥ ३॥

स्यादवाद परम प्रकाश कर, परमत तिमिर सब नाशकें।
वर्ताय जिनवृष सुमति जिनवर, मोक्षमार्ग प्रकाशकें॥
जहँतें सुजोग निरोधकर, निज अचल थलवासी भए। ति०

ॐ ह्रीं श्रीसुमतितीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

मुक्ति भए इस अवनितें, सुमतिनाथ जिन आदि।
ते पूजों वसु दरव सों, छूटें कर्म अनादि॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके अविचलकूटसे श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ी चौरासी कोटि बहत्तरलाख इक्यासी हजार सात सै सिद्धपदप्राप्तेभ्यः अर्घं नि०॥ ४॥

हैं कमलपत्र समान तन, जिन पद्मप्रभु जिनदेव जी।
गुण अमित मूर्त्ति सु अटल, पद्माकर लसत स्वयमेव जी॥
जहाँ तिष्ट कर कर कर्म नष्ट, सु अष्टमी भूपर थये। ति०॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभुतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

या भूतें अष्टमधरा, वसे पद्मप्रभु आदि।
ते पूजों अति भक्तितें, मेटो मम रागादि॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके मोहनकूटसे पद्मप्रभुजिनेन्द्रादि मुनि निन्यानवे कोटि सतासी लाख तेतालीस हजार सात सै सत्तर सिद्धपद प्राप्तेभ्यःअर्घं नि० ॥ ५ ॥

गीतिका छंद।

शोभायमान सुपार्श्व जिनके, श्रीसुपारशनाथ जी।
जे निकटवर्ती भवनको, कर लेत हैं निज साथ जी॥ तहँ
त्याग परमोत्तम सुतन, निज अटल मूरति परनये। ति.

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्रीसुपार्श्व आदिक ऋषी, जहँ ते भये शिवभूप।
सो थल पूजों भावसों, प्रगट होय चिद्रूप॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके प्रभासकूटसे श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्रादि मुनि उनचास कोड़ाकोड़ी चौरासी कोटि बहत्तर लाख सात हजार सात सै ब्यालीस सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६ ॥

आनँद करत सकल जगतको, तथा मोह तिमिर हरें।
पै दोषरूप कलंक वर्जित, अमल चन्द्र–प्रभा धरें॥
ते चन्द्रनाथ जिनेश जहँते, शिवरमा-नायक भए। ति०

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभुतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

सुन्दरी छंद ।

चन्द्रप्रभु आदिक मुनिराजजी ।
लहो या भूतें शिवराजजी ।
मैं जजत हूँ वसु द्रव्य चढ़ायकें ।
वसु गुणनकी आश लगायकें ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके **ललितकूटसे** चन्द्रप्रभु-जिनेन्द्रादि मुनि चौरासी कोड़ाकोड़ी बहत्तर कोटि अस्सी लाख चौरासी हजार पाँच सौ पचवन सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

जे कुंद पुष्प समान दंतन, कांतिकर राजत प्रभो ।
ते पुष्पदंत सु दिव्यध्वनि, कर भव्य भव तारत विभो।
उत पुष्पवन जहँते करम हनि, लोकशिखरविषैं थये।ति०

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंततीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

पुष्पदंतप्रभु आदिक मुनी ।
यहाँ थिर होय भवबाधा लुनी ॥
अर्घ लेय जजों शिवराजजी ।
मोहि निज निधि दीजे आज जी ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके **सुप्रभकूटसे** श्रीपुष्पदंत जिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ी निन्यानवे लाख सात हजार चार सै सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

नहि करत शीतल चन्द किरनन, चन्दनादिक सार है ।

भव-तप बुझावन वचन तिनके, परम अमृत धार हैं ॥
निज देह कर गिरि सों शीतल, भए जगत ललाम है॥ति०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

सोरठा ।

शीतल जिन आदि, इह अवनीतें शिव गए ।
पूजों तज परमाद, मोह तपन शीतल करो ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके **विद्युत्कूटसे** शीतलनाथ-जिनेन्द्रादि मुनि अठारह कोड़ाकोड़ी ब्यालीस कोटि बत्तीस लाख ब्यालीस हजार नौ सै पाँच सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं नि० ॥ ९ ॥

श्रेयसस्वरूपी आप हैं, पुनि सकल जिय श्रेयस[1] करें ।
तातें श्रेयांश सु सार्थ संज्ञा, श्रेयांसप्रभू श्रेयस धरें ॥
ऊरध गमन कर इस इला[2]तें, शिवशिलापर थिर भए॥ति०

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांशनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

श्रेयांश जिनराज, मुनि असंख्य शिवभूमिके ।
मैं पूजत हों आज, मेरो ही श्रेयस करो ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके **संकुलकूटसे** श्रीश्रेयांशनाथ-जिनेन्द्रादि, मुनि छ्यानबे कोड़ाकोड़ी छ्यानबे कोटि छ्यानबे लाख नौ हजार पाँच सै ब्यालीस सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

रागादि दुस्त्यज[3] मल हरन, जिन वचन सलिल समान हैं ।
श्रीविमल विमल करत, भविकजन विमलसौख्यनिधान हैं

---

१ कल्याण. २ पृथ्वी. ३ कठिनतासे नष्ट होनेवाले.

इस क्षेत्रको ही विमल कीनो, यहाँतें शिव जायकें ॥
तिहि शैलराज प्रशस्तकों, मैं नमों मन वच कायकें ॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

विमल जिनेश्वर मुख्य, मुनि असंख्य इस अवनितें ।
पायो अविचल सुक्ख, अर्घ जजों ताही निमित ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके सुवीरकुलकूटसे श्रीविमलनाथजिनेन्द्रादि मुनि सत्तर कोटि सात लाख छह हजार सात सौ ब्यालीस सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं नि० ॥ ११ ॥

जिनके सु स्वगुन अनंत कथ, गनधर लहत नहिं अंत हैं।
सु अनंत संसृत दुःख नाशन, श्रीअनंत महंत हैं ॥
सु अनंतधाम लहो जहाँ तें, अचल अमल सुथिर भए। ति.

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

शांत करो संसार, सादि अनंत कियो मुकति ।
ते पूजों जगतार, सुख अनन्त दातार लख ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके स्वयंभूकूटसे श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्रादि मुनि छ्यानवे कोड़ाकोड़ी सत्तर कोटि सत्तर लाख सत्तर हजार सात सौ सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं नि० ॥ १२ ॥

संसार दुःख—समुद्र डूबत, भव्य जीव उवारकें ।
सुख—धाम धारत धर्म्मप्रभू, सुधर्म विधि विस्तारकें ।
ते धर्मनायक इस धरातें, शिवरमानायक भए । ति०

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

चाल-छंद।

श्रीधर्मनाथ जगनामी। पुनि मुनि असंख्य शिवगामी॥
या भू ऊपर थिर राजे। ते पूजों निज हित काजे॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके सुदत्तकूटसे श्रीधर्मनाथ-जिनेन्द्रादि मुनि उन्नीस कोड़ाकोड़ी उन्नीस कोटि नौ लाख नौ हजार सातसै पंचानवे सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं नि० ॥ १३ ॥

जे शांत करत समस्त पातक, एक छिनमें नाथ जी।
जिन नाम मंत्र प्रभावतें, इन्द्रादि भए सनाथ जी॥
ते शांतिनाथ अपार भवदधि, पार या भूतें थये। ति०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्रीशांति नाथादि रिखीस। जहँतें गए त्रिभुवन सीस॥
ते जजत हूँ अर्घ धारी। नाशो भवव्याधि हमारी॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके शान्तिप्रभकूटसे श्रीशान्तिनाथ-जिनन्द्रादि मुनि नौ कोड़ाकोड़ी नौ लाख नौ हजार, नौ सौ निन्यानवे सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं नि० ॥ १४ ॥

कुंथादि जीवनमें दया जुत, ह्वै परम विराग जी।
श्रीकुंथुस्वामी चक्र लक्ष्मी, जीर्न तृनवत त्यागजी॥
जहँ तें विमल तप धार सकल, विकार तज निर-
मल भए। तिहि शै० ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

सोरठा।

कुन्थुनाथ जिनपाल, बहु मुनिगण जहँ तें मुकति।
सो थल जजों विशाल, उज्ज्वल द्रव्य संजोयके॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके ज्ञानधरकूटसे श्रीकुन्थुनाथ जिनेन्द्रादि मुनि छ्यानबे कोड़ाकोड़ी बत्तीस लाख छ्यानबे हजार सात सै ब्यालीस सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं नि० ॥ १९ ॥

सब द्रव्य गुण पर्याय जानत, राग द्वेष न पाइये।
सो तीन लोक प्रसिद्ध अरजिन, चरन नित प्रति ध्याइये।
तहँ समोशरणविभूति मध, सु तिष्ठ पुनि निजथल गये।

ॐ ह्रीं श्रीअरहनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अरहनाथ भगवान, आदि ऋषी इस अवनितें।
पायो पद निर्वान, अर्घ चढ़ावत हर्ष धर॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके नाटककूटसे श्रीअरह नाथजिनेन्द्रादि मुनि निन्यानबे कोटि निन्यानबे लाख निन्यानबे हजार सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं नि० ॥ १६ ॥

जिनमल्ल दुर्जय कामभट, जीतन सुमल्ल प्रधान हैं।
सतमल्लिका सम सुरभि तन, जुत मोह तम हनि भान हैं॥
जिहिं थानतें निर्वान पहुँचे, अचल अविनाशी भए।ति०

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

मल्लिनाथ तीर्थेश, अविचल सुख यहँते लयो।
पूजों ते परमेश, मोहि निसल्ल करो प्रभू॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके सम्बलकूटसे श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्रादि मुनि छ्यानबे कोटि सिद्धपदप्राप्तेभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १७ ॥

जिनके सुव्रत जयवंत जगमें, सुगुण रत्ननिधान हैं।
चिर लगे पाप पहार चूरन, को सु वज्र समान हैं ॥
ते धार मुनिसुव्रतजिनेश्वर, जहाँतें निज थल गए। ति.

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रततीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्रीमुनिसुव्रतनाथ, पार भए इस क्षेत्रतें।
जजों जोर जुग हाथ, मेरे सुव्रत काज ये ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदसिखरसिद्धक्षेत्रके निर्जरकूटसे श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्रादि मुनि निन्यानवे कोड़ाकोड़ी सत्तानबे कोटि नौ लाख नौ सौ निन्यानवे सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं नि० ॥ १८ ॥

इन्द्रादि देवनिकर नमतिं, तातें सुनमि जिन नाम है।
मिथ्यातमतमय तिमिर नाशंत, कर विहार सु स्वामि है ॥
धर तुर्ज ध्यान सु अंतमें, जहँते सुलोक शिखर थए। ति०

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

नमि जिनवर सुखकार, आदि यती या भूमितें।
भए भवोदधि पार, ते पूजों वसु द्रव्य सों ॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके मित्रधरकूटसे श्रीनमिनाथजिनेन्द्रादि

मुनि नौ सौ कोड़ाकोड़ी एक अरब पैंतालीस लाख सात हजार नौ सै ब्यालीस सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ १९ ॥

छंद गीतिका ।

ज्ञानी जननकर सदा जिनके, पार्श्व अनुभवरूप हैं ।
ते पार्श्वस्वामी भव्य भवफांसी, निवारन भूप हैं ॥
जहँ ते विमल तन त्याज सिद्धसमाजमें चिर थिर थए। ति.

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथतीर्थंकरादि निर्वाणभूमये पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

अडिल्ल ।

पार्श्वनाथको आदि, असंख्य ऋषीश जी ।
या भूधरतें भये, शिवालय ईश जी ॥
ते ही सिद्ध जजों, मैं मन वच कायकें ।
जन्म सुफल भयो आज, सु इह थल पायकें ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रके सुवर्णभद्रकूटसे श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ब्यासी करोड़ चौरासी लाख पैंतालीस हजार सात सौ ब्यालीस सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घ नि० ॥ २० ॥

गीतिका ।

इत्यादि जे ऋषिपाल, भव-दुख जालको छेदत भए ।
इहि शैलतें गति ऊर्ध्व करकें, अचल सौख्यमई थए ॥
सो आर्यक्षेत्र सुमौल गिरिपति, तीर्थराज महान है ।
मैं जजत अर्थ चढ़ायके, मो करहु परम कल्यान है ॥

ॐ ह्रीं विंशति तीर्थंकरादि असंख्यात मुनि सिद्धपदप्राप्तेभ्यः श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २१ ॥

छंद कुसुमलता

प्रथमहि बोध प्रजाहित स्वामि,
पुनि ऋषि ह्वै मुनि-मग विस्तार।
तप धर शुक्लध्यान दूजे कर,
चारों घाति कर्म्म निरवार ॥
केवल लह कैलाश शैलतें,
पुनि अघाति हनि उतरे पार।
सो कैलाश शिवाचल पूजों,
इतही मन तें चित्त सु सार ॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथजिनेन्द्रादि मुनि श्रीकैलाशगिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं नि० ॥ २२ ॥

इन्द्रादि देवन कर पूजत, श्रीजिन वाँसुपूज्य भगवान।
जिनके पंचकल्यानक कर, सो नगरी भई पवित्र महान ॥
चम्पापुरी भगवती, ताकों यह भूधरपै कर आव्हांन।
पूजत हो वसु द्रव्य लेयके, कर्म निर्जरा हेतु महान ॥

ॐ ह्रीं श्रीवाँसुपूज्य सिद्धपद प्राप्तेभ्यः श्रीचम्पापुरसिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं नि० ॥ २३ ॥

राजमती गुणमती त्याजकें, ब्रह्मलीन श्रीनेमिकुमार ।
जहँ सेसावनमें तप धरके, घातीकर्म हने दुठ चार ॥
पंचमगति जास गिरितें, भए अनंत सुगुण भंडार ।
सो गिरनार जजत मैं इत ही, मनहितें वसु द्रव्य सु धार ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथ सिद्धपदप्राप्तेभ्यः श्रीगिरनारसिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं नि० ॥ २४ ॥

श्रीतीर्थेश वीरके वचनामृत, पीकर जे हैं बलवान ।
ते अब ही इस काल विषै हीं, जीतत मदन मल्ल परधान ॥
पावापुरके निकट पद्मसर, तहँते पहुँचे निश्चल थान ।
सो शिवधरा जजत मैं इत ही, धरके चर्म तीर्थंकर ध्यान ॥

ॐ ह्री श्रीमहावीर सिद्धपदप्राप्तेभ्यः श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं नि० ॥ २६ ॥

आडिल्ल ।

'भागचन्द्र' के उदय होत, सुखकार जी ।
पावत है जिन तीरथ, दरशनसार जी ॥
ताकें परमप्रसाद भव्य, भव–सर तरें ।
नरक आदि दुख कूप, विषै नाहीं परे ॥

दोहा ।

अथ विशेष पूजन करन, चाह होय उर माहिं ।
तो इन अष्टक पढ़ सुधी, पूजा विशद कराहिं ॥

अडिल्ल।

गंगादिक निर्मल शीतल जलकर जजों।
पर भावनकी तृष्णा कबहुं नहिं भजों॥
श्रीतीर्थेश्वर शिव-भूधर पावन शिखर।
श्रीसम्मेद नाम गिरि पूजों नीर धर॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थंकर असंख्यात मुनि सिद्धपद प्राप्तेभ्यः जलं नि० ॥ १ ॥

ल्यायो परम सुगंध सुरभि दश दिशि करे।
श्रीजिन वचन समान ताप सब परहरे॥
श्रीतीर्थेश्वर शिव-भूधर पावन शिखर।
श्रीसम्मेद नाम गिरि पूजों गंध कर॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थंकर असंख्यात मुनि सिद्धपद प्राप्तेभ्यः चन्दनं नि० ॥ २ ॥

धवल अखंडित तंदुल शाल सु ल्यायकें।
अक्षयपदके हेत सु मन वच कायकें॥
श्रीतीर्थेश्वर शिव-भूधर पावन शिखर।
श्रीसम्मेद नाम गिरि पूजों पुंज धर॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थंकर असंख्यात मुनि सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अक्षतं नि० ॥ ३ ॥

सुमन सु भव्य समूह पूज्य गिरिवर है महा।
ल्यायो उत्तम पुष्प काम नाशन तहाँ॥

श्रीतीर्थेश्वर शिव-भूधर पावन शिखर ।
श्रीसम्मेद नाम गिरि पूजों पुष्प धर ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थंकर असंख्यात मुनि सिद्धपद प्राप्तेभ्यः पुष्पं नि० ॥ ४ ॥

मोदक आदि नैवेद्य कनक थारी धरों ।
क्षुधा वेदनी दहन वेद्य विथा हरों ॥
श्रीतीर्थेश्वर शिव-भूधर पावन शिखर ।
श्रीसम्मेद नाम गिरि पूजों चरु सु धर ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थंकर असंख्यात मुनि सिद्धपद प्राप्तेभ्यः नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

स्वपर बोधमय मणिमय दीपक कर जजों ।
संशय विभ्रम मोह भाव तत्क्षन तजों ॥
श्रीतीर्थेश्वर शिव-भूधर पावन शिखर ।
श्रीसम्मेद नाम गिरि पूजों दीप धर ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थंकर असंख्यात मुनि सिद्धपद प्राप्तेभ्यः दीपं नि० ॥ ६ ॥

हरिचन्दन आदिक दस गंध मिलायकें ।
खेवत विधि[1] गण उड़त धूम मिस पायकें ॥
श्रीतीर्थेश्वर शिव-भूधर पावन शिखर ।
श्रीसम्मेद नाम गिरि पूजों धूप धर ॥

---

१ कर्म.

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थंकर असंख्यात मुनि सिद्ध-पद प्राप्तेभ्यः धूपं नि० ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि सुरभि फल ले हितकार जी।
जजत सु अविनाशी फलदायक सार जी॥
श्रीतीर्थेश्वर शिव-भूधर पावन शिखर।
श्रीसम्मेद नाम गिरि पूजों विघ्न हर॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थंकर असंख्यात मुनि सिद्धपद प्राप्तेभ्यः फलं नि० ॥ ८ ॥

जल आदिक फल अंत सु द्रव्य संजोयके।
पद अनर्घके हेतु जजों मद खोयके॥
श्रीतीर्थेश्वर शिव-भूधर पावन शिखर।
श्रीसम्मेद नाम गिरि पूजों अर्घ धर॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसे बीस तीर्थंकर असंख्यात मुनि सिद्धपद प्राप्तेभ्यः अर्घं नि० ॥ ९ ॥

जयमाला।

अडिल्ल।

तीरथ सम्मेदाचल नाम प्रसिद्ध है।
भाव भक्तिकर पूजत देत सु ऋद्धि है
वचनरूप पुष्पनकी माल बनायके।
पूजत हों मैं बार बार शिरनायके।

पद्धरी छंद ।

जयजय सम्मेदशिखर सुनाम ।
पूरत भविजनके सकल काम ॥
जय कुगति भीतजन आर्त हर्न ।
पुनि पुनि आयो जहँ समोशर्न ॥ १ ॥
सुर इन्द्र सु पूजत नित्य आन ।
अहिमेन्द्र सु थल ही धरत ध्यान ॥
वंदित चारणऋषि कलिल हरन ।
जिनविंशति तीर्थ सु भूमि धरन ॥ २ ॥
सो ध्यान अध्ययन परम थान ।
गंधर्व करत जिनगुण सु गान ॥
जयजय यात्री जहँ करत एव ।
खेचर भूचर नित करत सेव ॥ ३ ॥
ऋतु छैकर सन्तत राजमान ।
जहँ मुनिजन नित ही धरत ध्यान ॥
वर बोध—सुधामृत देन दक्ष ।
परनाम सहज तहँ होय स्वच्छ ॥ ४ ॥
तुमको जजहों भजहों सदीव ।
नहिं मिथ्यातीर्थ गमो कदीव ॥
दीजे हमको सो समाधिथान ।
तुम भक्त सर्व सुख गुण निधान ॥ ५ ॥

घत्ता ।

मैं क्रोधी मानी माया खानी,
लोभ अनलकर जलत सदा ।
गति गति भटकायो बहु दुख पायो,
सौख न पायो रंच कदा ॥
हे शिव—भूधर अब शरण लयो,
तब मो दुरगति दुख दूर करो ।
तुम तीरथराजा हो महाराजा,
'दास बिहारी' शरम भरो ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

छंद कुसुमलता ।

'भागचन्दजी' महा सुधी,
तिन करे संस्कृत काव्य महान ।
तिनहीके अनुसार 'बिहारी'
भाषा रचो सो 'शिखर-विधान, ॥
संवत शत उन्नीस अधिक
ब्यालीस जेठ सुदि षष्ठी जान ।
अमिल होय अक्षर मिलाय,
जो सो सोधो सज्जन धीमान ॥ ७ ।
श्रीसम्मेद शिखरके वंदत,
पुत्रार्थी लह पुत्र प्रधान ।
धनअर्थी अक्षय धन पावे,
मोक्षार्थी शिव सौख्य महान ॥

एकहि बार बंदना करतें,
नरक पशू गति टरे निदान।
इमि लख तीर्थराज वर बंदों,
भक्ति भावधर श्रद्धावान ॥ ८ ॥

इत्याशीर्वादः ।

स्वर्गीय कविवर बाबू वृन्दावनजीकृत

२ श्रीवासुपूज्यजिन पूजा ।

छंद रूप कवित्त ।

श्रीमतवासुपूज्य जिनवरपद,
पूजन हेत हिये उमगाय ।
थापों मन वच तन शुचि करकें,
जिनकी पाटलदेव्या माय ॥
महिष चिन्ह पद लसे मनोहर,
लाल बरन तन समतादाय ।
सो करुनानिधि कृपादिष्ट करि,
तिष्ठहु सुपरितिष्ठ यहँ आय ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक।

छंद जोगीरासा। आंचलीबंध "जिनपद पूजों लवलाई।"

गंगाजल भरि कनककुंभमें, प्रासुक गंध मिलाई।
करम कलंक बिनाशन कारन, धार देत हरषाई।जिन०।
वासुपूज वसुपूजतनुजपद, वासव सेवत आई।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय **जलं** निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

कृष्णागरु मलयागिरचन्दन,
केशर संग घसाई।
भवआताप विनाशन कारन,
पूजों पद चित लाई॥ जि० वा०॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय **चन्दनं** नि०॥ २॥

देवजीर सुखदास शुद्ध वर,
सुवरन थार भराई।
पुंज धरत तुम चरनन आगे,
तुरित अखयपद पाई॥ जि० वा०॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये **अक्षतान्** नि०॥ ३॥

पारिजात संतानकल्पतरु
जनित सुमन बहु लाई ।
मीनकेतु मदभंजन कारन,
तुम पदपद्म चढ़ाई ॥ जि० वा० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं नि० ॥ ४ ॥

नव्य गव्य आदिक रसपूरित,
नेवज तुरित उपाई ।
क्षुधा रोग निरवारन कारन,
तुम्हें जजों शिरनाई ॥ जि० वा० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्याजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

दीपक जोत उदोत होत वर,
दश दिशिमें छवि छाई ।
तिमिर मोहनाशक तुमको लखि,
जजों चरन हरषाई ॥ जि० वा० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्याजिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि० ॥ ६ ॥

दशविध गंध मनोहर लेकर,
वातहोत्रमें डाई ।
अष्ट करम ये दुष्ट जरतु हैं,
धूम सु धूम उड़ाई ॥ जि० वा० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं नि० ॥ ७ ॥

सुरस सुपक्क सुपावन फल ले, कंचनथार भराई।
मोच्छ महाफलदायक लखि प्रभु, भेंट धरों गुनगाई॥
जि० वा०॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०॥ ८॥

जल फल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई।
शिवपदराज हेत श्रीपति, निकट धरों यह लाई॥
जिनपद० वासु०॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि०॥ ९॥

पंचकल्याणक–

छंद परिता (मात्रा १४)

कलि छट्ठ अषाढ़ सुहायो। गरभागम मंगल पायो॥
दशमें दिवितें इत आये। शत इन्द्र जजें सिर नाये॥ १॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णषष्ठ्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घं नि०॥ १॥

कलि चौदश फागुन जानों। जनमें जगदीश महानो॥
हरि मेरु जजे तब जाई। हम पूजत हैं चितलाई॥ २॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घं नि०॥ २॥

तिथि चौदस फागुन श्यामा। धरियो तप श्रीअभिरामा।
नृप सुन्दरके पय पायो। हम पूजत अतिसुख थायो॥ ३॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपमङ्गलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं नि०॥ ३॥

वदि भादव दोइज सोहै। लहि केवल आतम जो है॥
अन अंत गुनाकर स्वामी। नित बंदों त्रिभुवन नामी॥४॥
ॐ ह्रीं भाद्रकृष्णाद्वितीयायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥ ४ ॥

सित भादव चौदश लीनों। निरवान सुथान प्रवीनों॥
पुरचंपा थानकसेती। हम पूजत निजहित हेती॥
ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं नि० ॥ ५ ॥

जयमाला।

दोहा।

चंपापुरमें पंचवर, कल्यानक तुम पाय।
सत्तर धनु तनु शोभनो, जै जै जै जिनराय॥ १॥

छंद मोतियदाम (वर्ण १२)

महासुखसागर आगर ज्ञान।
अनंत सुखामृत मुक्त महान॥
महाबलमंडित खंडित काम।
रमाशिव संग सदा विसराम॥ २॥
सुरिंद फनिंद खगिंद नरिंद।
मुनिंद जजैं नित पादरविंद॥
प्रभू तुव अंतर भाव विराग।
सुबालहिं तें व्रतशीलसों राग॥ ३॥

किये नहिं राज उदाससरूप।
सुभावन भावत आतमरूप॥
अनित्य शरीर प्रपंच समस्त।
चिदातम नित्य सुखाश्रित वस्त॥ ४॥

अशर्न नही कोउ शर्न लहाय।
जहाँ जिय भोगत कर्मविपाय॥
निजातम कै पनमेसुर शर्न।
नहीं इनके विन आपद हर्न॥ ५॥

जगत्त जथा जलबुद्बुद येव।
सदा जिय एव लहै फलभेव॥
अनेक प्रकार धरी यह देह।
भमें भवकानन आन न नेह॥ ६॥

अपावन सात कुधात भरीय।
चिदातम शुद्ध सुभाव धरीय॥
धरे इनसो जब नेह तबेव।
सुआवत कर्म तबै वसुभेव॥ ७॥

जबै तन भोग जगत्त उदास।
धरे तब संवर निर्जर आस॥
करै जब कर्म कलंक विनाश।
लहै तब मोक्ष महासुखराश॥ ८॥

तथा यह लोक नराकृत नित्त।
विलोकियते पर द्रव्य विचित्त ॥
सुआतम जानन बोध विहीन।
धरै किन तत्त्वप्रतीत प्रवीन ॥ ९ ॥
जिनागम ज्ञानरु संजमभाव।
सबै निजज्ञान विना विरसाव ॥
सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्र सुकाल।
सुभाव सबै जिहिंतें शिव हाल ॥ १० ॥
लयो सब जोग सुपुन्य वशाय।
कहो किमि दीजिय ताहि गँवाय ॥
विचारत यों लवकान्तिक आय।
नमें पदपंकज पुष्प चढ़ाय ॥ ११ ॥
कह्यो प्रभु धन्य कियो सुविचार।
प्रबोध सु येम कियो जु विहार ॥
तबै सवधर्म तनों हरि आय।
रच्यौ शिविका चढ़ि आप जिनाय ॥ १२ ॥
धरे तप पाय सुकेवल बोध।
दियो उपदेश सुभव्य सँबोध ॥
लियो फिर मोच्छ महासुखराश।
नमैं नित भक्त सोई सुखआश ॥ १३ ॥

घत्तानंद।

नित वासव वन्दत, पाप निकंदत,
वासपूज्य व्रत ब्रह्मपती।
भवसकलखंडित, आनँदमंडित,
जै जै जै जैवंतजती ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सोरठा।

वासपजपद सार, जजै दरबविधि भावसों।
सो पावै सुखसार, मुक्ति मुक्ति को जो परम ॥ १५ ॥
इत्याशीर्वादःपरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

काशीनिवासी स्व० बाबू वृंदावनजीकृत

३ श्रीवर्द्धमानजिन (पावापुर) पूजा।

मत्तगयंद।

श्रीमत वीर हरैं भवपीर, भरैं सुखसीर अनाकुलताई।
केहरि अंक अरीकरदंक, नये हरिपंकतमौलि सुहाई ॥
मैं तुमकौं इत थापतु हौं प्रभु, भक्तिसमेत हिये हरखाई।
हे करुणागनधारक देव इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्॥

अथाष्टक।

छंद अष्टपदी।

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कंचनभृंग भरौं। प्रभु वेग हरो भवपीर, यातैं धार करौं॥ श्रीवीर महा अतिवीर सनमतिनायक हो। जय वर्द्धमान गुणधीर सनमतिदायक हो।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

मलयागिरचंदन सार, केसरसंग घसौं। प्रभु भवआताप निवार, पूजत हिय हुलसौं॥ श्रीवीर०॥ जयवर्द्धमान॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं नि०॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीने थारभरी। तसु पुंज धरौं अविरुद्ध, पाऊं शिवनगरी॥ श्रीवीर०॥ जयवर्द्ध०॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०॥३॥

सुरतरुके सुमनसमेत, सुमन सुमनप्यारे। सो मनमथभंजन हेत, पूजूं पद थारे॥ श्रीवीर०॥ जयवर्द्ध०॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०॥४॥

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी। पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी॥ श्रीवीर०॥ जयवर्द्ध०॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०॥५॥

तमखंडित मंडितनेह, दीपक जोवत हूं । तुम पदतर
हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हूं ॥ श्रीवीर० ॥ जयवर्द्ध० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि०।६।

हरिचंदन अगर कपूर, चूरि सुगन्ध करे । तुम पदतर
खेवत भूरि, आठौं कर्म जरे ॥ श्रीवीर० जयवर्द्ध० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि० ॥ ७ ॥

रितुफल कलवर्जित लाय, कंचनथार भरौं । शिव-
फलहित हे जिनराय, तुम ढिग भेट धरौं ॥ श्रीवीर०जय०।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥ ८ ॥

जल फल वसु साजि हिमथार, तनमन मोद धरौं ।
गुणगाऊं भवदधितार, पूजत पाप हरौं ॥ श्रीवीर ० ॥
जयवर्द्धमान० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं नि० ॥९॥

पंचकल्याणक–

राग टप्पा ।

मोहिं राखौ हो सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी, मोहि
राखौ हो सरना ॥ टेक ॥ गरभ साढ़ सित छट्ठ लियौ थिति,
त्रिशला उर अघहरना । सुर सुरपति नित सेव करत नित,
मैं पूजूं भवतरना ॥ मोहि राखौ० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठीदिने गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जनम चैत सित तेरसके दिन, कुंडलपुर कनवरना। सुर-गिरि सुरगुरु पूज रचाया, मैं पूजूं भवहरना॥ मोहि राखौ ०

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदशीदिने जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

मगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना। नृप कुमारघर पारन कीना, मैं पूजूं तुम चरना। मोहि राखौ हो० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमङ्गलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

शुकल दशैं वैशाख दिवस अरि, घात चतुक छय करना। केवल लहि भवि भवसर तारे, जजूं चरन सुखभरना ॥ मोहि राखौ० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतैं वरना। गनफनिवृंद जजैं तित बहु विधि, मैं पूजूं भयहरना ॥ मोहि राखौ० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावास्यायां मोक्षमङ्गलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला ।

छंद हरिगीता (२८ मात्रा) ।

गनधर असनिधर चक्रधर, हरधर गदाधर वरवदा ।
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा ॥
दुखहरन आनँदभरन तारन, तरन चरन रसाल हैं ।
सुकुमाल गुन मणिमाल उन्नत, भालकी जयमाल हैं ॥ १ ॥

छंद घत्तानंद (३१ मात्रा) ।

जय त्रिशलानंदन हरिकृतवंदन, जगदानंदन चंद वरं ।
भवतापनिकंदन तनमनवंदन, रहितसपंदन नयन धरं ॥ २ ॥

छंद तोटक ।

जय केवलभानुकलासदनं । भविकोकविकाशन कंजवनं ॥
जगजीत महारिपु मोहहरं । रजज्ञानदृगांबरचूरकरं ॥ १ ॥
गर्भादिक मंगल मंडित हो । दुख दारिदको नित खंडित हो ।
जगमाहिं तुमी सत पंडित हो । तुम ही भवभावविहंडित हो । २ ।
हरिवंशसरोजनकौं रवि हो । बलवंत महंत तुमी कवि हो ॥
लहि केवल धर्म प्रकाश कियौ । अबलौं सोई मारग राजति यौ ॥३॥
पुनि आपतने गुणमाहिं सही । सुर मग्न रहैं जितने सब ही ॥
तिनकी वनिता गुण गावत हैं । लय ताननिसों मनभावत हैं ॥४॥
पुनि नाचत रंग अनेक भरी । तुव भक्तिविषै पग एम धरी ॥
झननं झननं झननं झननं । सुर लेत तहाँ तननं तननं ॥ ५ ॥
घननं घननं घनघंट बजै । दृमदं दृमदं मिरदंग सजै ॥
गगनांगणगर्भगता सुगता । ततता ततता अतता वितता ॥ ६ ॥
धृगतां धृगतां गति बाजत है । सुरताल रसाल जु छाजत है ॥
सननं सननं सननं नभमैं । इकरूप अनेक जु धार भमैं ॥ ७ ॥
कइ नारि सु वीन बजावतु हैं । तुमरो जस उज्जल गावतु हैं ॥
करतालविषैं करताल धरैं । सुरताल विशाल जु नाद करैं ॥ ८ ॥
इन आदि अनेक उछाहभरी । सुरभक्ति करैं प्रभुजी तुमरी ।
तुम ही जगजीवनके पितु हो । तुमही बिनकारनके हितु हो ॥९॥

तुम ही सब विघ्न विनाशन हो। तुमही निज आनँद भासन हो॥
तुम ही चितचिंतितदायक हो। जगमाहिं तुमी सब लायक हो॥१०॥
तुमरे पनमंगलमाहिं सही। जिय उत्तम पुण्य लियौ सब ही॥
हमको तुमरी सरनागत है। तुमरे गुनमें मन पागत है॥११॥
प्रभु मो हिय आप सदा बसिये। जबलौं वसुकर्म नहीं नसिये।
तबलौं तुम ध्यान हिये वरतो। तबलौं श्रुतचिंतन चित्त रतो॥
तबलौं व्रत चारित चाहत हौं। तबलौं शुभ भाव सुगाहत हौं।
तबलौं सतसंगति नित्य रहौ। तबलौं मम सँजम चित्त गहौं॥१३॥
जबलौं नहिं नाश करौं अरिको। शिवनारि वरौं समताधरिको॥
यह द्यो तबलौं हमको जिनजी। हम जाचन हैं इतनी सुन जी॥१४॥

छंद घत्तानंद।

श्रीवीर जिनेशा नमतसुरेशा, नागनरेशा भगतिभरा।
'वृंदावन' ध्यावै विघ्न नशावै, वांछित पावै शर्मवरा॥१५॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानाजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

दोहा।

श्रीसनमतिके जुगलपद, जो पूजहिं धर प्रीत।
वृंदावन सो चतुर नर, लहै मुक्त नवनीत॥१६॥

इत्याशीर्वादः।

कवि प्रागदासजी कृत

४ श्रीजम्बूस्वामी की पूजा।

सोरठा।

चौबीसों जिन पाय, पंच परमगुरु बंदिकें।
पूज रचों सुखदाय, विघन हरण मंगल करन॥

अडिल्ल ।

विद्युन्माली देव चये जम्बू भये ।
कामदेव अवतार अन्तकेवलि थये ॥
कलियुग कारे पाख वरांगन शिव वरी ।
आवो आवो स्वामि भक्ति मम उर भरी ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् अत्र अवतरावतर संवौषट् आव्हाननं ।

सिंहपीठ मम देह कमल उर सोहनो ।
तिष्ठो तिष्ठो नाथ भविक मन मोहनो ॥
अब मोहि चिन्ता कौन सिद्धकारज भये ।
आतम अनुभव पाय सकल सुख थिर भये ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् तत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

स्वामी अपनो रूप मोहि इक कीजिये ।
मैं हूँ पूजक भक्ति आज चित दीजिये ॥
या संसार असार असाताके विषै ।
तो सूं तन्मय होत सकल आनँद लसै ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

अष्टक ।

गंगादिक जल लेय रत्न झारी भरूं ।
जै जैकार उचार धार दे थुति करूं ॥

सिद्धचक्रको सुमरि जम्बु पूजा करों।
ज्ञानावरणी कर्मतनी थितिकों हरों॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् ज्ञानावरणीय कर्म क्षयार्थं जलं नि० ॥ १ ॥

बावन चन्दन ल्याय और मलयागिरी।
केशर द्रव्य मिलाय घिसायरु इक करी॥
सिद्धचक्रको सुमरि जम्बु आगे धरूं।
दर्शनावरणी ताप मेटि शीतल करूं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् दर्शनावरणीय कर्म क्षयार्थं चन्दनं नि० ॥ २ ॥

तन्दुल मुक्ता जेम इंदु[1]-किरण जिसे।
दीर्घ अखंडन कोय पुंज करिये तिसे॥
ज्योतिस्वरूपी ध्याय जम्बु पूजा रचूं।
अन्तराय छय कीन अखैपदमें मचूं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् अंतराय कर्म क्षयार्थं अक्षतं नि० ॥ ३ ॥

पारिजात मन्दारन मेरु सुहावने।
संतानक सुरतरुके पुष्प मँगावने॥
अलखरूप वर धार जम्बुके पद जजूं।
मोहनी कर्म निवार काम तें न लजूं॥

---

१ चन्द्रमा।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् मोहनीय कर्म क्षयार्थं पुष्पं नि० ॥ ४ ॥

सुन्दर घृत मिष्टान्न विविध मेवाजिके ।
मैदा सहित मिलाय पिंड करिये तिके ॥
समयसार पद वंदि भेंट आगे धरूं ।
जम्बूस्वामि मनाय वेदनीको हरूं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् वेदनीय कर्म क्षयार्थं नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

चन्द्रकान्ति और सूर्यकान्ति शुभमणि भली ।
अरु स्नेही बाति जोय आनँद रली ॥
अष्ट गुण जुत ध्याय जम्बु पूजों सदा ।
चार आयु थिति मेटि मरूं नाहीं कदा ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् आयु कर्म क्षयार्थं दीपं नि० ॥ ६ ॥

धूप दशांग मँगाय अग्नि सँग क्षेपहूं ।
धूपायन जू कनकमय सार जलेय हूँ ॥
नीच गोत्र अरु ऊंच गोत्र नहिं पाय हूँ ।
आतमरूपी थाय निरंजन ध्याय हूँ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् गोत्र कर्म क्षयार्थं धूपं नि० ॥ ७ ॥

श्रीफल लोंग बदाम छुहारे लायकें ।
एला पूगी आदि मनोज्ञ मिलायकें ॥
अष्ट गुण जुत वंद सकल भवकूं हरो ।
नामकर्म झर जाँय प्रभु पायन परों ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् नाम कर्म क्षयार्थं फलं निं० ॥ ८ ॥

छप्पय ।

क्षायक सम्यक शुद्ध ज्ञान, केवलमय सोहै ।
केवलदर्शन ज्योति, अगुरुलघु सूछम जो है ॥
इकमें नेक समाय, हर्ष भारी गुण तेरो ।
अव्यावांध रहाय, अर्घ दे चरणन चेरो ॥

दोहा ।

जल चन्दन अक्षत पहुप, और अधिक नैवेद ।
दीप धूप फल जोर कर, जिन पूजों निरखेद ॥

अडिल्ल ।

घंटा भेरि मृदंग नगारे मिलि बजें ।
तुरही झालर झांझ मजीर धुनि गजे ॥
पूर्ण कनक भर थाल अर्घ कीजे महा ।
मोक्ष शिखरके हेतु कीर्तिलक्ष्मी लहा ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं निं० ॥ ९ ॥

प्रत्येक अर्घ ।

सोरठा ।

क्षायक रुचिमय धर्म, आदि धर्म धर्मनिविषै ।
जिहि काटे सब कर्म, अर्घ चढ़यरु वीनवूं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् क्षायकसम्यक्त गुण विराजमानाय अर्घं नि० ॥ १ ॥

जामें द्रव्य अनंत, व्यय उत्पत्ति ध्रुवता लिये ।
हैं जैसे भासंत, केवलज्ञान जजूं सदा ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् केवलज्ञान विराजमानाय अर्घं नि० ॥ २ ॥

केवलदर्शन ज्योति, प्रगटी चेतन मुकुरमें ।
जिहि देखे सब होत, भाव सहित पूजा करों ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् केवलदर्शन विराजमानाय अर्घं नि० ॥ ३ ॥

वीर्य अनंतानंत, ताबल कर चिद थिर रहे ।
लोकशिखरके अन्त, बन्दों मैं नित भावसों ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् अनन्तवीर्य गुण विराजमानाय अर्घं नि० ॥ ४ ॥

सूक्षम थूल न होय, पुद्गल पिंड झरा ।
यहाँ लघु भारी गुण जोय, पूज करों नित चावसों ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् सूक्ष्मत्व गुण विराजमानाय अर्घं नि० ॥ ५ ॥

इकमें नेक समाय, अवगाहन गुणतें सदा।
यह जिन आगम छाह, अर्घ देय पदको नमूं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् अवगाहन गुण विराजमानाय अर्घ्यं नि० ॥ ६ ॥

षट् प्रकार क्षय वृद्धि, द्रव्य माँहि यह होत है।
सत्ता भिन भिन सिद्ध, अगुरुलघू राखे सदा॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् अगुरुलघु गुण विराज मानाय अर्घ्यं नि० ॥ ७ ॥

वाधक भाव नशाय, सुख अनंत प्रगट्यो तहाँ।
अव्यावाध रहाय, पूजा कर पायन परूँ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीमज्जम्बूस्वामिन् अव्यावाध गुण विराजमानाय अर्घ्यं नि० ॥ ८ ॥

जयमाला।

दोहा।

वर्द्धमान जिन वंदिके, गुरु गौतमके पाँय।
और सुधर्मा मुनि प्रणमि, जम्बूस्वामि मनाय॥ १॥

पद्धरी छंद।

जय विद्युन्माली देव सार। पंचम दिव[1]में महिमा अपार।
चय राजगृहीपुर शेठ थान। उपज्यों मनमथ[2] अंतिम सुजान॥२॥
लघु वयमें उर वैराग धार। जगरूप अथिर जान्यो कुमार॥
तब सब परिवार उछाह ठान। व्याही वनिता चतु वय समान॥३॥
रतननको दीप दिपै महल। वनिता बैठी जुत काम शैल॥
तिनसों ज्ञानादिक वच उचार। रागादि रहित कीनी सुनार॥४॥

१ स्वर्ग, २ कामदेव.

तब विद्युतप्रभ इक चोर आय । रस भीनी अष्ट कथा कहाय ॥
ताकूं वैराग्य कथा प्रकाश । निज तत्त्व दिखायो चिद्‌विलास ॥५॥
जग अथिर रूप थिर नाहिं कोय । नाहिं शरण जीवकों आनि होय ॥
संसार भ्रमणविधि पाँच ठान । इक जीव भ्रमत नहिं साथ आन ॥६॥
षट द्रव्य भिन्न सत्ता लखाय । जिय अशुचि देह माहीं रमाय ॥
आश्रव परसों जब प्रीति होय । संवर चिद निज अनुभूति जोय ॥७॥
तप कर वसु विधि सत्ता नशाय । निज स्वयंसिद्ध त्रय लोक गाय ॥
निजधर्म लसें कोई पुमानं । दुर्लभ नहिं आतम ज्ञान भान ॥ ८ ॥
द्वादश भावन यह भाँति भाय । बहु जन जुत भेटे वीर पाय ॥
दीक्षा धरकें चतु ज्ञान थाय । ऋधि सप्त लई महिमा अथाय ॥९॥
सन्मति गौतम धर्मा मुनीश । शिव पाई तबै केवल जगीश ॥
वाणी जु खिरी अक्षरन रूप । तत्त्वनिको इमि भाष्यो स्वरूप ॥१०॥
आपापर परसों प्रीति होय । चैतन्य वधे चव भाँति सोय ॥
तब निज अनुभूति प्रकाश पाय । सत्ता सूं कर्म झड़े अधाय ॥ ११ ॥
चव बंध रहित तब होत जीव । सिद्धालय थिरता ह्वै सदीव ॥
षट द्रव्य बखानों भेदरूप । चैतन्य और पुद्गल स्वरूप ॥ १२ ॥
चालन सहचारी थिति सुहाय । बरतावन द्रव्यन कूं सु भाय ॥
पुनि सर्व द्रव्य जामें समाय । अवकाश द्वितीय अवलोक गाय ॥१३॥
मुनि श्रावकको आचार भास । आचारज ग्रन्थनमें प्रकाश ॥
पुनि आरजखंड विहार कीन । जम्बुवनमें थितिजोग लीन ॥१४॥
सब कर्मनको छयकर मुनीश । शिवबधू लही विश्वास वीस ।
मथुरातें पश्चिम कोस आध । क्षत्रीपदमें महिमा अगाध ॥ १५ ॥
बृजमंडलमें जो भव्य जीव । कातिक वदि रथ काढ़त सदीव ॥
कैऊ पूजत कैऊ नृत्य ठान । कैऊ गावत विधि सहित तान ॥१६॥
निशि द्यौस[1] होत उत्सव महान । पूरत भव्यनके पुण्य थान ॥
पदकमल प्राम ध्रुव दास होय । निज भक्ति विभव दे अरज मोय ॥१७॥

---

१ दिन.

घत्ता त्रिभंगी छंद ।

जल चन्दन ल्याये अछत मिलाये, पुष्प सुभाये मन भाये ।
नैवेद्य सुदीपं दश विधि धूपं, फल जु अनूपं श्रुत गाये ॥
सुवरणको थालं भर जु रसालं, फेरि त्रिकालं शिर नाये ।
गुणमाल तिहारी मम उर धारी, जगत उजारी सुखदाये ॥ १८ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने श्रीमज्जम्बूस्वामिने अर्घं नि० ॥

कवि आशारामजी कृत

५ श्रीसोनागिरि पूजा ।

अडिल्ल छंद ।

जम्बू द्वीप मझार भरत क्षेत्र सु कहो ।
आर्यखंड सुजान भद्रदेशे लहो ॥
सुवर्णगिरि अभिराम सु पर्वत है तहाँ ।
पंच कोड़ि अरु अर्द्ध गये मुनि शिव तहाँ ॥१॥

दोहा ।

सोनागिरिके शीसपर, बहुत जिनालय जान ।
चन्द्रप्रभू जिन आदि दे, पूजों सब भगवान ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रसे साढ़े पाँच करोड़ सिद्धपद प्राप्तये अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हाननं । तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव सन्निधिकरणं ॥

अष्टक।

सारंग छंद।

पद्मद्रहको नीर ल्याय, गंगासे भरके।
कनक कटोरी माँहि, हेम थारनमें भरके॥
सोनागिरिके शीस, भूमि निर्वाण सुहाई।
पंच कोड़ि अरु अर्द्ध, मुक्ति पहुँचे मुनिराई॥
चन्द्रप्रभु जिन आदि सकल जिनवर पद पूजों।
स्वर्गमुक्ति फल पाय, जाय अविचल पद हूजो॥
दोहा—सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
तिन पद धारा तीन दे, तृषा हरनके काज॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

केशर आदि कपूर, मिले मलयागिरि चन्दन।
परिमल अधिकी तास, और सब दाह निकंदन॥ सो०
दोहा—सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
ते सुगंध कर पूजिये, दाह निकन्दन काज॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि०॥ २॥

तंदुल धवल सुगन्धित ल्याय, जल धोय पखारों।
अक्षयपदके हेतु, पुंज द्वादश तहाँ धारों॥ सोना०

दोहा–सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
तिनपद पूजा कीजिये, अक्षयपदके काज ॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि० ॥३।
बेला और गुलाब मालती कमल मँगाये।
पारिजातके पुष्प ल्याय, जिन चरन चढ़ाये॥सो०॥
दोहा–सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
ते सब पूजों पुष्प ले, मदन विनाशन काज॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो कामवाण विध्वंशनाय पुष्पं नि० ।६।
व्यंजन जो जग माँहि, खांड़ घृत माँहि पकाये,
मीठे तुरत बनाय, हेम थारी भर ल्याये ॥सो०॥
दोहा–सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
ते पूजों नैवेद्य ले, क्षुधा हरणके काज ॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षत्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि०॥५
मणिमय दीपप्रजाल धरों पंकति भर थारी।
जिनमंदिर तम हार, करहु दर्शन नर नारी ॥सो०॥
दोहा–सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
करों दीप ले आरती, ज्ञान प्रकाशन काज ॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विध्वंशनाय दीपं नि० ॥ ६ ॥
दश विध धूप अनूप, अग्नि भाजनमें डालों।
जाकी धूम सुगंध रहे, भर सर्व दिशा लों ॥ सो०॥

दोहा-सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
धूप कुंभ आगे धरों, कर्म दहनके काज॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं नि० ॥७॥

उत्तम फल जग माँहि, बहुत मीठे अरु पाके।
अमित अनार अवार, आदि अमृतरस छाके॥सो०
दोहा-सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
उत्तम फल तिनको मिलो, कर्म विनाशन काज॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥ ८ ॥

जल आदिक वसु द्रव्य, अर्घ करके धर नांचो।
बाजे बहुत बजाय, पाठ पढ़के सुख सांचो। सो० ॥
दोहा-सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
ते हम पूजे अर्घले मुक्ति रमनके काज॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं नि० ॥ ९॥

अडिल छंद।

श्रीजिनवरकी भक्ति, सु जे नर करत हैं।
फलवांछा कुछ नाहिं, प्रेम उर धरत हैं।
ज्यों जगमाँहि किसान, सु खेतीकों करे।
नाज काज जिय जान सु शुभ आपहिं झरें॥
ऐसे पूजा दान, भक्ति यश कीजिए।
सुख सम्पति गति मुक्ति, सहज कर लीजिये॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥१०॥

जयमाला ।

दोहा ।

सोनागिरिके शीसपर, जिनमन्दिर अभिराम ।
तिन गुणकी जयमालिका, वर्णत 'आशाराम' ॥ १ ॥

पद्धरी छंद ।

गिरि नीचे जिनमन्दिर सु चार । ते यतिन रचे शोभा अपार ।
तिनके अति दीरघ चौक जान । तिनमें यात्री मेलें सु आन ॥ २॥
गुमठी छज्जो शोभित अनूप । ध्वज पंकति सोहे विविध रूप ॥
वसु प्रातिहार्य तहाँ धरे आन । सब मंगल द्रव्यनिकी सुखान॥३॥
दरवाजोंपर कलशा निहार । कर जोर सु जय जय ध्वनि उचार ॥
इक मंदिरमें यतिराज मान । आचार्य विजयकीर्ती सु जान ॥ ४ ॥
तिन शिष्य भगीरथ विबुध नाम । जिनराज भक्ति नहिं और काम॥
अब पर्वतको चढ़ चलो जान । दरवाजो तहाँ इक शोभे महान ॥५॥
तिस ऊपर जिन प्रतिमा निहार । तिन वंदि पूज आगे सुधार ॥
तहाँ दुखित भुखितको देत दान । याचकजन तहाँ है अप्रमान ॥६॥
आगे जिनमन्दिर दुहू ओर । जिनगान होत वादित्र शोर ॥
माली बहु ठाड़े चौक पौर । ले हार कलंगी तहाँ देत दौर ॥ ७ ॥
जिन-यात्री तिनके हाथ माहिं । बखशीस रीझ तहाँ देते जाहिं॥
दरवाजो तहाँ दूजो विशाल । तहाँ क्षेत्रपाल दोऊ ओर लाल ॥ ८॥
दरवाजे भीतर चौक माहिं । जिनभवन रचे प्राचीन आहिं ॥
तिनकी महिमा वरणी न जाय । दो कुंड सुजल कर अति सुहाय ॥९॥
जिनमन्दिरकी वेदी विशाल । दरवाजो तीजो बहु सुढाल ॥
ता दरवाजे पर द्वारपाल । ले मुकुट खड़े अरु हाथ माल ॥ १० ॥
जे दुर्जनको नहिं जान देत । ते निंदकको ना दरश देत ॥
चल चन्द्रप्रभूके चौक माहिं । दालाने तहाँ चौतर्फ आँय ॥ ११ ॥

तहाँ मध्य सभामंडप निहार । तिसकी रचना नाना प्रकार ॥
तहाँ चन्द्रप्रभूके दरश पाय । फल जात लहो नर जन्म आय ॥१२॥
प्रतिमा विशाल तहाँ हाथ सात । कायोत्सर्ग मुद्रा सुहात ॥
वंदें पूजें तहाँ देय दान । जन नृत्य भजन कर मधुर जान॥ १३ ॥
ता थेई थेई थेई बाजत सितार । मृदंग बीन मुहचंग सार ॥
तिनकी ध्वनि सुन भवि होत प्रेम । जयकार करत नाचत सुप्रेम ।१४।
ते स्तुतिकर फिर नाय शीस । भवि चले मनोकर कर्म खीस ॥
यह सोनागिरि रचना अपार । वरणनकर को कवि लहे पार॥१५॥
अति तनक बुद्धि 'आशा' सुपाय । वश भक्ति कही इतनी सु गाय ॥
मैं मन्द बुद्धि किमि लहों पार । बुधिमान चूक लीजो सुधार॥१६॥
ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा ।

सोनागिरि जयमालिका, लघु मति कही बनाय ।
पढ़े सुने जे प्रीतिसे, सो नर शिवपुर जाय ॥ १७ ॥

इत्याशीर्वादः ।

स्व० त्यागी दौलतरामजी वर्णी कृत

६ श्रीनयनागिरि पूजा ।

दोहा ।

पावन परम सुहावनो, गिरि रेशिन्दि अनूप ।
जजहुँ मोद उर धार अति, कर त्रिकरण[1] शुचिरूप ॥

ॐ ह्रीं श्रीनयनागिरिसिद्धक्षेत्रसे वरदत्तादि पंच ऋषिराज सिद्धपद प्राप्तये अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

---

1 मन, वचन, काय योग.

अष्टक।

(ढार नंदीश्वरपूजाकी)

अति निर्मल क्षीरधि, वारि भर हाटक झारी।
जिन अग्र देय त्रय धार, करन त्रिरुगै छारी॥
पन वरदत्तादि मुनीन्द्र, शिवथल सुखदाई।
पूजों श्रीगिरिरेशिन्दि, प्रमुदित चित थाई॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि० ॥ १ ॥

मलयागिरि चन्दन सार, केशर संग घसी।
शीतल वासित सुखकार, जन्माताप कसी॥ पन वरदत्ता०

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारताप विनाशनाय चन्दनं नि० ॥ २ ॥

शुचि विमल नवलै अति श्वेत, द्युति जित सोमतनी।
सो ले पद अक्षय हेत, अक्षत युक्त अनी॥ पन वरदत्तादि०

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

शुभ सुमन त्रिदश-तरुँकेय, स्वच्छ करण्ड भरी।
मदब्रह्म तनुज हरनेय, भेंट जिनाग्र धरी॥ पन वरदत्तादि०

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्रेभ्यो कामवाण विध्वंशनाय पुष्पं नि०।४।

छुध फणहि[६] विहंगमनाथैं, नेवज सद्यानी।
कर विविध मधुर रस साथ, विधि युत अमलानी॥ प०

---

१ जन्म, जरा, मरण. २ नूतन-नये. ३ कल्पवृक्ष संबंधी. ४ पिटारा. ५ काम. ६ सर्प. ७ गरुड़.

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्रेभ्यो छुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

मिथ्यातम भानन भानु, स्वपर उजास कृती ।
ले मणिमय दीप सुभानि, विमल प्रकाश धृती ॥प०

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विध्वंशनाय दीपं नि० ॥ ६ ॥

कर्मेन्धन जारन काज, पावक भाव मही ।
वर दश विधि धूपहि साज, खेय उछाह गही ॥ प०

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

दृग घ्राण रसन मन प्रीय, प्रासुक रस भीने ।
लख दायक मोक्ष पदीय, लै फल अमलीने ॥ प० ॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि० ॥८ ॥

शुचि अमृत आदि समग्र, सजि वसु द्रव्य प्रिया ।
धारों त्रिजगतपति अग्र, धर वर भक्त हिया ॥ प० ॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दि सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं नि० ॥९॥

जयमाला ।

दोहा ।

जग बाधक विधि बाधकर, है अबाध शिव धाम ।
निवसे तिन गुण धर सुहृद, गाऊँ वर जयदाम ॥ १ ॥

पद्धरी छंद ।

जय जय जिन पार्श्व जगत्रि स्वाम । भवदधि तारण तारी ललाम ॥
हति घाति चतुक ह्वै युक्त सन्त । दृगज्ञान शर्म वीरज अनन्त ॥ १ ॥
सो समवशरण कमला समेत । विहरत विहरत पुर ग्राम खेत ॥
सुर नर मुनिगण सेवत कृपाल । आये भव हितु तिहिं अचल भाल २
अरु वरदत्तादि मुनीन्द्र पंच । चतुविंधि हनि केवल ज्ञान संच ॥
लख सर्व चराचर त्रिजग केय । त्रैकालिक युगपत पद अमेय ॥ ३ ॥
निज आनन द्वैविधि वृषस्वरूप । उपदेश भरण भवि भर्म कूप ।
दृगज्ञान चरण सम्यक प्रकार । शिवपथ साधक कह त्रिजग तार॥४
अरु सप्त तत्त्व षट द्रव्य केव । पञ्चास्तिकाय नव पदन भेव ॥
इम कारण सो दरशाय ईश । तिहि भूधर शिर पुनि अघति पीश॥५॥
पंचमगति निवसे तब सुरेश । आके ले सुरगण संग अशेष ॥
रेशिन्दि शिखर रज शीस ल्याय । किय पंचम कल्यानक उछाय॥६॥
मैं तिन पद पावन चाह ठान । वंदों पुनि पुनि सो सुखद थान ॥
मन वच तन तिन गुण स्व उर धार । 'वर्णी दौलत' अनचाह हार॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा ।

आनन्द कन्द मुनीन्द्र गुण, धर उरकोष मझार ।
पूजें ध्यावें सो सुधी, ह्वै लघु मद्धि भव पार ॥ ५ ॥

इत्याशीर्वादः ।

---

१ यति और श्रावक धर्म ।

पं० दरयावजी चौधरी कृत

७ श्रीद्रोणागिरि पूजा।

दोहा।

सिद्धक्षेत्र परवत कहो, द्रोनागिरि तसु नाम।
गुरुदत्तादि मुनीश नमि, मुक्ति गये इहि ठाम॥ १॥
इहि थल जिन प्रतिमा भवन, बने अपूरव धाम।
तिन प्रति पुष्प चढ़ाइये, और सकल तज काम॥ २॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरि सिद्धक्षेत्रसे गुरुदत्तादि मुनि सिद्धपद प्राप्तये अत्र अवतर अवतर संवौषट्। आव्हाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणं॥

अष्टक।

सुन्दरी छंद।

सरस छीर सु नीर गहीर ले,
जिन सुचरनन धारा दीजिए।
नशत जन्म जरा मरन रोग हैं,
मिटत भवदुख शिवसुख होत हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं नि०॥ १॥

अगर कुमकुम चन्दन गारिये,
जिन चढ़ाय सो ताप निवारिये।

जगत जन जे भव आताप ते,
चर्च जिनपद अघ इमि नाशते ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारताप विनाशनाय चन्दनं नि०२

देवजीरो उर सुख दासके, पावनी घन केशर आदिके ।
सरस अनयारे अनवींध ले, पुंज जिनपद आनन तीन दे ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि०॥३॥

सरस बेला और गुलाब ले, केवरो इन आदि सुवास ले ।
जिन चढ़ाय सुहर्ष सु पावते, मदन काम व्यथा सब नाशते

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो कामवाण विध्वंशनाय पुष्पं नि०४

पूरियाँ पेढ़ादि सु आनिये,
खोपरा खुरमादिक जानिये ।
सरस सुन्दर थार सु धारिये,
जिन चढ़ाय छुधादि निवारिये ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो छुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि० ५

रतन मणिमय जोति उद्योत है,
मोह तम नशि ज्ञानहु होत है ।
करत जिन तट भविजन आरती,
सकल जन्मन ज्ञान सु भासती ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि०६

कूट वसु विधि धूप अनूप है,
महका रही अति सुन्दर अग्नि है ।

---

१ विना घुने ।

खेइये जिन अग्र सु आयकें,
ज्वलन मध्य सु कर्म नशायकें ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

नारियल सु छुहारे ल्याइये, जायफल बादाम मिलाइये।
लायची पुंगी फल ले सही, जजत शिवपुरकी पावे मही ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल सु चन्दन अक्षत लीजिये, पुष्प धर नैवेद्य गनीजिये।
दीप धूप सुफल बहुसाजहीं, जिन चढ़ाय सु पातक भाजहीं

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

करत पूजा जे मन लायकें,
हेत निज कल्यान सु पायकें।
सरस मंगल नित नये होत हैं,
जजत जिनपद ज्ञान उद्योत है ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ १०॥

जयमाला ।

दोहा ।

ये ही भावना भायकें, करौं आरती गाय।
सिद्धक्षेत्र वर्णन करौं, छंद पद्धड़ी गाय ॥ १ ॥

पद्धड़ी छंद ।

श्रीसिद्धक्षेत्र पर्वत सु जान । श्रीद्रोनागिरि ताको सु नाम ॥
तहँ नदी चन्द्रभागा प्रमान । मगरादि मीन तामें सुजान ॥ १ ॥
ताको अति सुन्दर बहे नीर । सरिता सुजान भारी गँभीर ॥
यात्री सु देश देशनके आये । अस्नान करत आनंद पाय ॥ २ ॥
फलहोड़ी ग्राम कहो बखान । जिनमन्दिर तामें एक जान ।
पूजा सु पाठ तहाँ होत नित्त । स्वाध्याय वाचनामें सुचित्त ॥ ३ ॥
अब गिरि उतंग जानो महान । ता ऊपरको लागे शिवान ॥
तरुवर उन्नत अति सघन पाँत । फल फूल लगे नाना सु भाँत ॥ ४ ॥
तहँ गुफा रही सुन्दर गहीर । मुनिराज ध्यान धारे तपीस ॥
गिरि शीस बीस जिन बने धाम । अब और होय तिनको प्रनाम ॥ ५ ॥
तहँ झालर घँटा बजे सोय । वादित्र बजें आनंद होय ॥
तहँ प्रातिहार्य मंगल सु दर्व । भामंडल चन्द्रोपक सु सर्व ॥ ६ ॥
जिनराज विराजत ठाम ठाम । वन्दत भविजन तज सकल काम ॥
पूजा सु पाठ तहँ करे आय । ताथेई थेई थेई आनंद पाय ॥ ७ ॥
अब जन्म सुफल अपनो सु जान । श्रीजिनवर पद पूजे सु आन ॥
मैं भ्रम्यो सदा या जग मझार । नहिं मिली शरन तुमरी अपार ॥ ८ ॥

सोरठा ।

सिद्धक्षेत्र सु महान, विघन हरन मंगल करन ।
वन्दत शिवसुख थान, पावत जे निश्चय भजे ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

गीतिका छंद ।

जाके सुपुत्र पौत्रादि सम्पति, होंय मंगल नित नये ।
जो जजत भजत जिनेन्द्रपद, अब तासु विघन सु नशि गए ॥
मैं करों थुति निज हेत मंगल, देत फल वांछित तही ।
'दरयाव' है जिन दास तुमरो, आश हम पूरन भई ॥

इत्याशीर्वादः ।

स्व० कवि जवाहरलालजी कृत

८ श्रीगिरनार पूजा।

छप्पय।

श्रीगिरनार शिखर परवत, दक्षिण दिश सोहे।
नेमिनाथ जिनै मुक्तिधाम, सब जन मन मोहे॥
कोड़ बहत्तर सात शतक, मुनि शिवपद पायो।
ताथल पूजन काज, भविक चित अति हर्षायो।
तिस तीरथराज सु क्षेत्रको, आह्वानन विधि ठानकर॥
पूजूं त्रिजोग मन वचन तन, श्रावकजन गुन गान कर॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारसिद्धक्षेत्रसे श्रीनेमिनाथ संबुकुमार प्रद्युम्नकुमार अनिरुद्धकुमार और बहत्तर करोड़ सातसै मुनि मोक्षपद प्राप्तये अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सान्निधिकरणं।

अष्टक।

दोहा।

प्रभु तुम राजा जगतके, कर्म देहि दुख मोय।
करूं यथारथ बीनती, हमपै करुणा होय॥

चाल लावनीकी।

तीरथ गढ़ गिरनारको, नित पूजो हो भाई।
हेम भृंग भर तीरथादिक, शुभ प्रासुक पावन लाई॥